४. षट्खंडागमके रचयिता

प्रस्तुत ग्रंथके अनुसार (पृ. ६८) षट्खंडागमके विषयके ज्ञाता धरसेनचार्य थे, जो सोरठ देशके गिरिनगरकी चन्द्रगुफामें ध्यान करते थे। नंदिसंघकी प्राकृत पट्टावलीके अनुसार वे आचारांग के पूर्ण ज्ञाता थे किन्तु 'धवला' के शब्दोंमें वे अंगों और पूर्वोंके एकदेश ज्ञाता थे। कुछ भी हो वे थे भारी विद्वान् और श्रुत-वत्सल। उन्हें इस बातकी चिंता हुई कि उनके पश्चात् श्रुतज्ञानका लोप हो जायगा, अतः उन्होंने महिमा नगरीके मुनिसम्मेलनको पत्र लिखा जिसके फलस्वरूप वहांसे दो मुनि उनके पास पहुंचे। आचार्यने उनकी बुध्दिकी परीक्षा करके उन्हें सिध्दान्त पढाया। ये दोनों मुनि पुष्पदंत और भूतबलि थे। धरसेनाचार्यने इन्हें सिखाया तो उत्तमतासे किंतु ज्यों ही आषाढ शुक्ला एकादशीको अध्ययन पुरा हुआ त्योंही वर्षाकालके बहुत समीप होते हुए भी उन्हें उसी दिन[१] (इन्द्रनन्दिके अनुसार धरसेनाचार्याने उन्हें दूसरें दिन बिदा किया।) अपने पाससे विदा कर दिया। दोनों शिष्योंने गुरुकी बात अनुल्लंघनीय मानकर उसका पालन किया और वहांसे चलकर अंकुलेश्वरमें [१] (इन्द्रनन्दिने इस पत्तनका नाम कुरीश्वर दिया है। वहां वे नौ दिनकी यात्रा करके पहुंचे।) चातुर्मास किया। धरसेनाचार्यने इन्हें वहांसे तत्क्षण क्यों रवाना कर दिया यह प्रस्तुत ग्रंथमें नहीं बतलाया गया है। किंतु इन्द्रनन्दिकृत श्रुतावतार तथा विबुध श्रीधरकृत श्रुतावतारमें लिखा है कि धरसेनाचार्यको ज्ञात हुआ कि उनकी मृत्यु निकट है, अतएव इन्हें उस कारण क्लेश न हो इससे उन्होंने उन मुनियोंको तत्काल अपने पाससे विदा कर दिया [२] (२ स्वासन्नमृतिं ज्ञात्वा मा भुत्संक्लेशमेतयोरस्मिन्। इति गुरुणा संचिन्त्यं द्वितीयदिवसे ततस्तेन। इन्द्रनन्दि, श्रुतावतार आत्मनो निकटमरणं ज्ञात्वा धरसेनस्तयोर्मा क्लेशो भवतु इति मत्वा तन्मुनिविसर्जनं करिष्यति।) संभव है उनके वहां रहनेसे आचार्यके ध्यान और तपमें विघ्न होता, विशेषतः जव कि वे श्रुतज्ञानका रक्षासंबंन्धी अपना कर्तव्य पूरा कर चुके थे। वे संभवतः यह भी चाहते होंगे कि उनके वे शिष्य वहांसे जल्दी निकल कर उस श्रुतज्ञानका प्रचार करें। जो भी हो, धरसेनाचार्यकी हमें फिर कोई छटा देखनेको नहीं मिलती, वे सदाके लिये हमारी आंखोंसे ओझल हो गये।

धवलकारने धरसेनाचार्यके गुरुका नाम नहीं दिया। इन्द्रनन्दिके श्रुतावतारमें लोहार्य तककी गुरुपरम्पराके पश्चात् विनयदत्त, श्रीदत्त, शिवदत्त और अर्हद्दत्त इन चार आचार्योंको उल्लेख किया गया है। वे सब अंगों और पूर्वोके एकदेश ज्ञाता थे। इनके पश्चात् अर्हव्दलिका उल्लेख आया है। अर्हव्द-लि बडे भारी संघनायक थे। वे पूर्वदेशमें पुंड्रवर्धनपुरके कहे गये है। उन्होंने पंचवर्षीय युग - प्रतिक्रमणके समय बडा भारी यति-सम्मेलन किया जिसमें सौ योजनके यति एकत्र हुए। उनकी भावनाओं परसे उन्होंने जान लिया कि अब पक्षपातका जमाना आगया है। अतः उन्होंने नन्दि, वीर, अपराजित, देव, पंचस्तूप, सेन, भद्र, गुणधर, गुप्त, सिंह, चंद्र आदि नामोंसे भिन्न भिन्न संघ स्थापित किये जिसमें एकत्व और अपनत्वकी भावनासे खूब धर्मवात्सल्य और धर्मप्रभावना बढे।

आचार्य अर्हब्दिल और माघनन्दि

श्रुतावतारके अनुसार अर्हब्दलिके अनन्तर माघनन्दि हुए जो मुनियोंमें श्रेष्ठ थे। उन्होंने अंगो और पूर्वोका एकदेश प्रकाश फैलाया और पश्चात् समाधिमरण किया। उनके पश्चात् ही सौराष्ट्र देशके गिरिनगरके समीप ऊर्जयन्त पर्वतकी चन्द्रगुफाके निवासी धरसेनाचार्यका वर्णन आया है।

इन चार आरातीय यतियों और अर्हब्दलि, माघनन्दि व धरसेन आचार्योंके बीच इन्द्रनन्दिने कोई गुरु-शिष्य-परम्पराका उल्लेख नहीं किया। केवल अर्हब्दलि आदि तीन आचार्योमें एकके पश्चात् दूसरेके होनेका स्पष्ट संकेत किया है। पर इन तीनोंके गुरु-शिष्य तारतम्यके सबंन्धमें भी उन्होंने कुछ नहीं कहा। यही नहीं प्रत्युत उन्होंने स्पष्ट कह दिया है कि --

गुणधरधरसेनान्वयगुर्वोः पूर्वापरक्रमाऽस्माभिः।
न ज्ञायते तदन्वयकथकागममुनिजनाभावात् ।। १५१ ।।

अर्थात् गुणधर और धरसेनकी पूर्वापर गुरुपरम्परा हमें ज्ञात नहीं है, क्योंकि, उसका वृन्तान्त न तो हमें किसी आगममें मिला और न किसी मुनिने ही बतलाया।

किंतु नन्दिसंघकी प्राकृत पट्टावलीमें अर्हद्बलि, माघनन्दि और धरसेन तथा उनके पश्चात् पुष्पदन्त और भुतबलिको एक दूसरेके उत्तराधिकारी बतलाया है जिससे ज्ञात होता है कि धरसेनके दादागुरु अर्हब्दलि और गुरु माघनन्दि थे।

नन्दिसंघकी संस्कृत गुर्वावलीमें भी माघनन्दिका नाम आया है । इस पट्टावलीके प्रारंभमें भद्रबाहु और उनके शिष्य गुप्तिगुप्तकी वंदना की गई है, किंतु उनके नामके साथ संघ आदिका उल्लेख नहीं किया गया है । उनकी वन्दनाके पश्चात् मूलसंघमें नन्दिसंघ बलात्करगणके उत्पन्न होनेके साथ ही माघनन्दिका उल्लेख किया गया है। संभव है कि संघभेदके विधाता अर्हब्दलि आचार्यने उन्हे ही नन्दिसंघका अग्रणी बनाया हो। उनके नामके साथ 'नन्दि' पद होनेसे भी उनका इस गणके साथ संबन्ध प्रकट होता है। यथा--

श्रीमानशेषनरनायकवन्दितांघ्रिः **श्रीगुप्तिगुप्त** इति विश्रुतनामधेयः ।
यो **भद्रबाहु**मुनिपुंगवपट्टपद्मः **सूर्यः** स वो दिशतु निर्मलसंघवृध्दिम् ।। १ ।।
श्रीमूलसंघेSजनि नन्दिसंघः तस्मिन्बलात्कारगणोSतिरम्यः ।
तत्राभवत्पूर्वपदांशवेदी **श्रीमाघनन्दी** नरदेववन्द्यः ।। २ ।।

जै. सि. भा. १, ४ पृ. ५१.

पट्टावलीमें इनके पट्टधारी जिनचंद्र और उनके पश्चात् पद्मनन्दि कन्दकुन्दका उल्लेख किया गया है, पर धरसेनका नहीं। अतः संशय हो सकता है कि ये वे ही धरसेनके गुरु हैं या नहीं। किंतु उनके 'पूर्वपदांशवेदी' अर्थात् पूर्वोके एकदेशको जाननेवाले, ऐसे विशेषणसे पता चलता है कि ये वे ही हैं। पट्टावलीमें उनके शिष्य धरसेनका उल्लेख न आनेका कारण यह हो सकता है कि धरसेन विद्यानुरागी थे और वे संघसे अलग रहकर शास्त्राभ्यास किया करते थे। अतः उनकी अनुपस्थितिमें संघका नायकत्व माघनन्दिके अन्य शिष्य जिनचन्द्रपर पडा हो। उधर धरसेनाचार्यने अपनी विद्याव्दारा शिष्यपरम्परा पुष्पदन्त और भूतबलिव्दारा चलाई।

माघनन्दिका उल्लेख ' जंबुदीवपण्णत्ति ' के कर्ता पद्मनन्दिने भी किया है और उन्हें राग, द्वेष और मोह से रहित, श्रुतसागरके पारगामी, मति-प्रगल्भ, तप और संयमसे सम्पन्न तथा विख्यात कहा है। इनके शिष्य सकलचंद्र गुरु थे जिन्होंने सिध्दान्तमहोदधिमें अपने पापरूपी मैल धो डाले थे । उनके शिष्य श्रीनन्दि गुरु हुए जिनके निमित्त जंबूदीवपण्णति लिखी गई। यथा --

गय-राय-दोस-मोहो सुद-सायर-पारओ-मइ-पगब्भो ।
तव-संजम-संपण्णो विक्खाओ **माघनंदि**-गुरू।। १५४ ।।
तस्सेव य वरसिस्सो सिध्दंत-महोदहिम्मि धुय-कलुसो ।
णय-णियम-सील-कलिदो गुणउत्तो **सयलचंद-गुरू** ।। १५५ ।।
तस्सेव य वर-सिस्सो णिम्मल-वर-णाण-चरण-संजुत्तो ।
सम्मद्दंसण-सुध्दो **सिरिणंदि**-गुरु त्ति विक्खाओ ।। १५६ ।।
तस्स णिमित्तं लिहियं जंबूदीवस्स तह य पण्णत्ती ।
जो पढइ सुणइ एदं सो गच्छइ उत्तम ठाणं ।। १५७ ।।

(जैन साहित्य संशोधक, खं १. जंबूदीवपण्णत्ति. लेखक पं. नाथूरामजी प्रेमी)

यथा-जंबुदीवपण्णत्तिका रचनाकाल निश्चित नहीं है। किन्तु यहां माघनन्दिको श्रुतसागर पारगामी कहा है जिससे जान पडता है कि संभवतः यहां हमारे माघनन्दिसे ही ताप्तर्य है।

माघनन्दि सिद्धान्तवेदीके संबन्धका एक कथानक भी प्रचलित है। कहा जाता है कि माघनन्दि मुनि एकबार चर्याके लिये नगरमें गये थे। वहां एक कुम्हारकी कन्याने इनसे प्रेम प्रगट किया और वे उसीके साथ रहने लगे। कालान्तरमें एकबार संघमें किसी सैध्दांतिक विषयपर मतभेद उपस्थित हुआ और जब किसीसे उसका समाधान नहीं हो सका तब संघनायकने आज्ञा दी कि इसका समाधान माघनन्दिके पास जाकर किया जाय। अतः साधु माघनन्दिके पास पहुंचे और उनसे ज्ञानकी व्यवस्था मांगी। माघनन्दिने पूछा, 'क्या संघ मुझे अब भी यह सत्कार देता है? ' मुनियोंने उत्तर दिया ' आपके श्रुतज्ञानका सदैव आदर होगा। ' यह सुनकर माघनन्दीको पुनः वैराग्य हो गया और वे अपने सुरक्षित रखे हुए पीछी कमंडलु लेकर पुनः संघमें आ मिले। जैन सिद्धान्तभास्कर, सन् १९१३, अंक ४, पृष्ठ १५१ पर 'एक ऐतिहासिक स्तुति ' शीर्षकसे इसी कथानकका एक भाग छपा है और उसके साथ सोलह श्लोकोंकी एक स्तुति छपी है जिसे कहा है कि माघनन्दिने अपने कुम्हार-जीवनके समय कच्चे घडोंपर थाप देते समय गाते गाते बनाया था।

यदि इस कथानकमें कुछ तथ्यांश हो भी तो संभवतः वह उन माघनन्दि नामके आचार्योंमेंसे किसी एकके संबन्धका हो सकता है जिनका उल्लेख श्रवणबेलगोलके अनेक शिलालेखोंमें आया है। (देखो जैनशिलालेखसंग्रह). इनमेसे नं. ४७१ के शिलालेखमें शुभचंद्र त्रैविद्यदेवके गुरु माघनन्दि सिद्धान्तदेव कहे गये हैं। शिलालेख नं. १२९ में विना किसी गुरु-शिष्य संबन्धके माघनन्दिको जगत्प्रसिद्ध सिद्धान्तवेदी कहा है। यथा-
-

नमो नम्रजनानन्दस्यन्दिने **माघनन्दिने** ।
जगत्प्रसिद्धसिद्धान्तवेदिने चित्प्रमोदिने ।। ४ ।।

ये दोनों आचार्य हमारे षट्खण्डागमके सच्चे रचयिता हैं। प्रस्तुत ग्रंथमें इनके प्रारम्भिक नाम, धाम व गुरु-परम्पराका कोई परिचय नहीं पाया जाता। धवलाकारने उनके संबन्धमें केवल इतना ही कहा है कि जब

आचार्या पुष्पदंत और भूतबलि

महिमा नगरीमें सम्मिलित यतिसंघको धरसेनाचार्यका पत्र मिला तब उन्होंने श्रुत-रक्षासंबन्धी उनके अभिप्रायको समझकर अपने संघमेंसे दो साधु चुने जो विद्याग्रहण करने और स्मरण रखनेमें समर्थ थे, जो अत्यन्त विनयशील थे, शीलवान् थे, जिनका देश, कुल और जाति शुध्द था और जो समस्त कलाओंमें पारंगत थे। उन दोनोंको धरसेनाचार्यके पास गिरिनगर (गिरनार) भेज दिया । धरसेनाचार्यने उनकी परीक्षा की। एकको अधिकाक्षरी और दूसरेको हीनाक्षरी विद्या बताकर उनसे उन्हे षष्ठोपवाससे सिध्द करनेको कहा। जब विद्याएं सिध्द हुई तो एक बडे बडे दांतोंवाली और दूसरी कानी देवीके रुपमें प्रगट हुई। इन्हें देख कर चतुर साधकोंने जान लिया कि उनके मंत्रोंमें कुछ त्रुटि है। उन्होंने विचारपूर्वक उनके अधिक और हीन अक्षरोंकी कमी वेशी करके पुनः साधना की, जिससे देवियां अपने स्वाभाविक सौम्यरुपमें प्रकट हुई। उनकी इस कुशलतासे गुरुने जान लिया कि ये सिध्दान्त सिखानेके योग्य पात्र हैं। फिर उन्हें क्रमसे सब सिध्दान्त पढा दिया। यह श्रुताभ्यास आषाढ शुक्ला एकादशीको समाप्त हुआ और उसी समय भूतोंने पुष्पोंपहारोंद्वारा शंख, तूर्य और वादित्रोंकी ध्वनिके साथ एककी बडी पूजा की। इसीसे आचार्यश्रीने उनका नाम भूतबलि रक्खा। दूसरेकी दंतपंक्ति अस्त-व्यस्त थी, उसे भूतोंने ठीक कर दी, इससे उनका नाम पुष्पदन्त रक्खा गया। ये ही दो आचार्य पुष्पदन्त और भूतबलि षट्खण्डागमके रचियता हुए।

इन दोनोंने धरसेनाचार्यसे सिध्दान्त सीखकर ग्रंथ-रचना की, अतः धरसेनाचार्य उनके शिक्षागुरु थे। पर उनके दीक्षागुरु कौन थे इसका कोई उल्लेख प्रस्तुत ग्रंथमें नहीं मिलता। ब्रह्म नेमिदत्तने अपने आराधना-कथाकोषमें भी धरसेनाचार्यकी कथा दी है। उसमें कहा है कि धरसेनाचार्यने जिस मुनिसंघको पत्र भेजा था उसके संघाधिपति महासेनाचार्य थे और उन्हींने अपने संघमेंसे पुष्पदन्त और भूतबलिको उनके पास भेजा। यह कहना कठिन है कि ब्रह्म नेमिदत्तने संघाधिपतिका नाम कथानकके लिये कल्पित कर लिया है या वे किसी आधार परसे उसे लिख रहे हैं।

विबुध श्रीधरने अपने श्रुतावतारमें भविष्यवाणी के रुपमें एक भिन्न ही कथानक दिया है जो इस प्रकार है --

इसी भरतक्षेत्रके वांमिदेश (ब्रह्मदेश?) में वसुंधरा नामकी नगरी होगी। वहांके राजा नरवाहन और रानी सुरुपाको पुत्र न होनेसे राजा खेदखिन्न होगा। तब सुबुध्दि नामके सेठ उन्हें पद्मावतीकी पूजा करनेका उपदेश देंगे। राजाके तदनुसार देवीकी पूजा करनेपर पुत्रप्राप्ति होगी और वे उस पुत्रका नाम पद्म रक्खेंग । फिर राजा सहस्त्रकूट चैत्यालय बनवावेंगे और प्रतिवर्ष यात्रा करेंगे। सेठजी भी राजप्रासादसे पद पदपर पृथ्वीको जिनमंदिरोंसे मंडित करेंगे। इसी समय वसंत ऋतुमें समस्त संघ वहां एकत्र होगा और राजा सेठजीके साथ जिनपूजा करके रथ चलावेंगे। उसी समय राजा अपने मित्र मगधस्वामीको मुनींद्र हुआ देख सुबुध्दि सेठके साथ वैराग्यसे जैनी दीक्षा धारण करेंगे। इसी समय एक लेखवाहक वहां आवेगा। वह जिन देवोंको नमस्कार करके व मुनियोंकी तथा (परोक्षमें) धरसेन गुरुकी वन्दना करके लेख समर्पित करेगा। वे मुनि उसे वांचेंगे कि गिरिनगरके समीप गुफावासी धरसेन मुनीश्वर आग्रायणीय पूर्वकी पंचम वंस्तुके चौथे प्राभृतशास्त्रका व्याख्यान प्रारम्भ करनेवाले हैं। धरसेन भट्टारक कुछ दिनोंमें नरवाहन और सुबुध्दि नामके मुनियों को पठन, श्रवण और चिन्तनक्रिया कराकर आषाढ शुक्ला एकादशीको शास्त्र समाप्त करेंगे। उनमेंसे एककी भूत रात्रिको बलिविधि करेंगे और दूसरेके चार दांतोंको सुन्दर बना देंगे। अतएव भूत-बलिके प्रभावसे नरवाहन मुनिका नाम् भूतबलि और चार दांत समान हो जानेसे सुबुध्दि मुनिका नाम पुष्पदन्त होगा[1] । इसके लेखकका समय आदि अज्ञात है और यह कथानक कल्पित जान पडता है। अतएव उसमें कही गई बातोंपर कोई जोर नहीं दिया जा सकता।

श्रवणबेलगोलके एक शिलालेख (नं. १०५) में पुष्पदन्त और भूतबलिको स्पष्ट रुपसे संघभेद-कर्ता अर्हव्दलिके शिष्य कहा है। यथा --

य: **पुष्पदन्ते**न च **भूतबल्या**ख्येनापि शिष्य्द्मव्दितयेन रेजे ।
फलप्रदानाय जगज्जनानां प्राप्तोऽङ्कुराभ्यामिव कल्पभूजः ।। २५ ।।
अर्हब्दलिस्संघचतुर्विधं स श्रीकोण्डकुन्दान्वयमूलसंघम् ।
कालस्वभावादिह जायमान-व्देषेतराल्पीकरणाय चक्रे ।। २६ ।।

यद्यपि यह लेख बहुत पीछे अर्थात् शक सं. १३२० का है, तथापि संभवतः लेखकने किसी आधार पर से ही इन्हें अर्हद्वलिके शिष्य कहा होगा। यदि ऐसा हो तो यह भी संभव है कि ये इन दोनोंके दीक्षा-गुरु हो और धरसेनाचार्यने जिस मुनि-सम्मेलनको पत्र भेजा था वह अर्हद्वलिका युग-प्रतिक्रमणके समय एकत्र किया हुआ समाज ही हो, और वहींसे उन्होंने अपने अत्यन्त कुशाग्रबुध्दि शिष्य पुष्पदन्त और भूतबलिको धरसेनाचार्यके पास भेजा हो। पट्टावलीके अनुसार अर्हद्वलिके अन्तिम समय और पुष्पदन्तके प्रारम्भ समयमें २१+१९=४० वर्षका अन्तर पडता है जिससे उनका समसामायिक होना असंभव नहीं है। केवल इतना ही है कि इस अवस्थामें, लेख लिखते समय धरसेनाचार्यकी आयु अपेक्षाकृत कम ही मानना पडेगी।

प्रस्तुत ग्रंथमें पुष्पदन्तका सम्पर्क एक और व्यक्तिसे बतलाया गया है । अंकुलेश्वरमें चातुर्मास समाप्त करके जब वे निकले तब उन्हें जिनपालित मिल गये और उनके साथ वे वनवास देशको चले गये [2]। (२. विबुध श्रीधरकृत श्रुतावतारके अनुसार पुष्पदन्त और भूतबलिने अंकुलेश्वरमें ही षडंग आगमकी रचना की। (तन्मुनिद्वयं अंकुलेसुरपुरे गत्वा मत्वा षडंगरचनां कृत्वा शास्त्रेषु लिखाप्य...)) (' जिणवालियं दट्ठूण पुप्फर्येताइरियो वणवास विसयं गदो ' पृष्ठ ७१।) दट्ठूण का साधारणतः दृष्ट्वा अर्थात् देखकर अर्थ होता है । पर यहां पर यदि दट्ठूण का देखकर यही अर्थ ले लिया जाता है तो यह नहीं मालूम होता कि वहां जिनपालित कहांसे आ गये? दट्ठूणका अर्थ द्रष्टुं अर्थात् देखनेके लिये भी हो सकता है,[3]. ३ जैसे, रामो तिसमुद्द -मेहलं पुहइं पालेऊण समत्थो। पउम च. ३१.४०. संसार-गमण-भीओ इच्छिइ घेतूणं पव्वज्जं ।पउं च. ३१,४८. जिसका तात्पर्य यह होगा कि पुष्पदंन्त अंकुलेश्वरसे निकलकर जिनपालितको देखनेके लिये वनवास चले गये। संगतिकी दृष्टिसे यह अर्थ ठीक बैठता है। इन्द्रनन्दिने जिनपालितको पुष्पदन्तका भागिनेय

अर्थात् भनेज कहा, है। पर इस रिश्तेके कारण वे उन्हें देखनेके लिये गये यह कदाचित् साधुके आचारकी दृष्टिसे ठीक न समझा जाय इसलिये वैसा अर्थ नहीं किया। वनवास देशसे ही वे गिरिनगर गये थे और वहांसे फिर वनवास देशको ही लौट गये। इससे यही प्रान्त पुष्पदन्ताचार्यकी जन्मभूमि ज्ञात होती है। वहां पहुंचकर उन्होंने जिनपालितको दीक्षा दी और 'वीसदि सुत्रों' की रचना करके उन्हें पढाया, और फिर उन्हे भूतबलिके पास भेज दिया। भूतबलिने उन्हें अल्पायु जान, महाकर्मप्रकृति पाहुडके विच्छेद-भयसे द्रव्यप्रमाणसे लगाकर आगेकी ग्रन्थ-रचना की। इस प्रकार पुष्पदन्त और भूतबलि दोनों इस सिध्दान्त ग्रंथके रचयिता हैं और जिनपालित उस रचनाके निमित्त कारण हुए।

पुष्पदन्त और भूतबलिके बीच किसने कितना ग्रंथ रचा

पुष्पदन्त और भूतबलिके बीच आयुमें पुष्पदनत ही जेठे प्रतीत होते हैं। धवलकारने अपनी टीकाके` मंगलाचरणमें उन्हें ही पहले नमस्कार किया है और उन्हें 'इसि-समिइ-वइ '(ऋषिसमिति-पति) अर्थात् ऋषियों और मुनियोंकी सभाके नायक कहा है। उनकी ग्रंथ-रचना भी आदिमें हुई और भूतबलिने अपनी रचना अन्ततः उन्हीके पास भेजी जिसे देख वे प्रसन्न हुए। इन बातोंसे उनका **जेठे थे** ज्येष्ठत्व पाया जाता है। नन्दिसंघकी प्राकृत पट्टावलीमें वे स्पष्टतः भूतबलिसे पूर्व पट्टाधिकारी हुए बतलाये गये हैं।

वर्तमान ग्रंथमें पुष्पदन्तकी रचना कितनी है और भूतबलिकी कितनी, इसका स्पष्ट उल्लेख पाया जाता है। पुष्पदन्तने आदिके प्रथम 'वीसदि सूत्र ' रचे। पर इन वीस सूत्रोंसे धवलकारका समस्त सत्प्ररुपणाके वीस अधिकारोंसे तात्पर्य है, न कि आदिके २० नम्बर तकके सूत्रोंसे, क्योंकि, उन्होंने स्पष्ट कहा है कि भूतबलिने द्रव्यप्रमाणानुगमसे लेकर रचना की (पृ. ७१) । जहांसे द्रव्यप्रमाणानुगम अर्थात् संख्याप्ररुपणा प्रारंभ होती है वहांपर भी कहा गया है कि --

संपहि चोद्दसण्हं जीवसमासाणमत्थित्तमवगदाणं सिस्साणं तेसिं चेव परिमाणं पडिवोहणट्ठं भूदबलियाइरियो सुत्तमाह।

अर्थात-- 'अब चौदह जीवसमासोके अस्तित्व को जान लेनेवाले शिष्योंकी उन्हीं जीवसमासोंके परिमाण बतलानेके लिये भूतबलि आचार्य सूत्र कहते है'।

श्रुतपंचमीका प्रचार

इस प्रकार सत्प्ररुपणा अधिकारके कर्ता पुष्पदन्त और शेष समस्त ग्रंथके कर्ता भूतबलि ठहरते है। धवलामे इस ग्रंथकी रचनाका इतना ही इतिहास पाया जाता है। इससे आगेका वृतान्त इन्द्रनन्दिकृत श्रुतावतारमें मिलता है। उसके अनुसार भूतबिल आचार्यने षटखण्डागमकी रचना पुस्तकारुढकरके ज्येष्ठ शुक्ला ५ को चर्तुविध संघके साथ उन पुस्तकोंको उपकरण मान श्रुतज्ञानकी पूजा की जिससे श्रुतपंचमी तिथिकी प्रख्याति जैनियोंमें आजतक चली आती है और तिथिको वे श्रुतकी पूजा करते हैं[1] (जेष्ठसितपक्षपञ्चम्यां चातुर्वर्ण्यसंघमसवेतः। तत्पुस्तकोपकरणैर्व्यधात् क्रियापूर्वकं पूजाम् ।। १४३ ।। श्रतुपञ्चमीति तेन प्रख्यातिं तिथिरिय परामाप । अद्यापि येन तस्यां श्रुतपूजां कुर्वेते जैनाः ।। १४४ ।।) फिर भूतबलिने उन षट्खण्डागम पुस्तकोंको जिनपालितके हाथ पुष्पदन्त गुरुके पास भेजा। पुष्पदन्त उन्हें देखकर और अपने चिन्तित कार्यको सफल जान अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने भी चातुर्वर्ण संघसहित सिध्दान्तकी पूजा की।